

सर्वोच्च न्यायालय की प्रतिवेदन
इंडियन कॉपर कॉर्पोरेशन लिमिटेड

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

7 नवंबर, 1960

(एस. के. डास, एम. हिदायतुल्लाह, के. सी. दास गुप्ता,

जे. सी. शाह और एन. राजगोपाल अय्यंगार, न्यायमूर्तिगण)

बिक्री कर - "स्पष्टीकरण बिक्री" - एक राज्य में बिक्री लेकिन दूसरे राज्य में

वितरण - उपभोग पहले गंतव्य राज्य में नहीं - क्या यह "दूसरे राज्य" में बिक्री है - भारत

का संविधान, अनुच्छेद 286(1)(ए) - बिहार कर अधिनियम, 1947 (1947 का बिहार 19)

धारा 2(जी) और 33

अपीलकर्ता ने 26-1-1950 से 31-3-1950 की अवधि के दौरान ऐसी बिक्री की, जिसके तहत माल का स्वामित्व बिहार राज्य में हस्तांतरित हुआ, लेकिन माल की सुपुर्दगी बिहार के बाहर की गई और उसका उपभोग भी बिहार के बाहर ही हुआ। इनमें से कुछ बिक्री में माल की सुपुर्दगी पहले गंतव्य राज्य में की गई, जबकि अन्य मामलों में माल पहले गंतव्य राज्य में उपभोग के लिए नहीं था। अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि ये दोनों प्रकार की बिक्री अनुच्छेद 286(1)(क) के तहत कर से मुक्त हैं, क्योंकि ये बिहार के बाहर की बिक्री थीं।

न्यायाधीशों (द्वारा हिदायतुल्लाह, दास गुप्ता और राजगोपाला अय्यंगार न्यायमूर्तिगण) ने निर्णय दिया कि जिन बिक्री में पहले गंतव्य राज्य में सुपुर्दगी की गई और उसका उपभोग बिहार के बाहर किया गया, वे अनुच्छेद 286(1)(क) के स्पष्टीकरण के अंतर्गत बिहार के बाहर की बिक्री थीं और बिहार उन पर कर नहीं लगा सकता था। वहीं, जिन बिक्री में पहले गंतव्य राज्य में सुपुर्दगी की गई और उसका उपभोग बिहार के बाहर किया गया, वे "स्पष्टीकरण बिक्री" नहीं थीं और "बिहार के बाहर" की बिक्री भी नहीं थीं, इसलिए बिहार उन पर कर लगा सकता था। जहां माल का स्वामित्व राज्य के भीतर बिक्री के प्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप हस्तांतरित हो जाता है, वह बिक्री अनुच्छेद 286(1)(ए) के प्रयोजन के लिए "बाहरी"

बिक्री नहीं मानी जाएगी, जब तक कि वह स्पष्टीकरण के अंतर्गत न आती हो। बिक्री की पहली श्रेणी में अपीलकर्ता छूट का हकदार था और उसके लिए यह साबित करना आवश्यक नहीं था कि प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के लिए वितरित माल वास्तव में वहीं उपभोग किया गया।

बॉम्बे राज्य बनाम यूनाइटेड मोटर्स (इंडिया) लिमिटेड, [1953] एस.सी.आर. 1069 और बंगाल इम्युनिटी कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य, [1955] 2 एस.सी.आर. 603 का संदर्भ दिया गया।

बर्मा शेल ऑयल स्टोरेज एंड डिस्ट्रीब्यूटिंग कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम वाणिज्यिक कर अधिकारी, सी.ए. संख्या 751/57 और सी.ए. संख्या 10/1958 (अप्रकाशित) पर अवलंबन किया गया।

द्वारा एस. के. दास और शाह, न्यायमूर्तिगण - बिहार बिक्री कर अधिनियम में विधि अनुकूलन आदेश, 1951 द्वारा जोड़ी गई धारा 33 ने संविधान-पूर्व कानूनों पर राज्य की कराधान शक्ति पर वही प्रतिबंध लगाए जो अनुच्छेद 286 द्वारा संविधान-पश्चात कानूनों पर लगाए गए थे। अधिनियम की धारा 33(1)(ए)(आई) ने केवल "स्पष्टीकरण विक्रय" पर कर लगाने की शक्ति छीनी, लेकिन "गैर-स्पष्टीकरण विक्रय" पर कर लगाने की शक्ति नहीं छीनी। ऐसा विक्रय जिसमें माल बिहार के बाहर वितरित किया गया हो, लेकिन विक्रय के प्रत्यक्ष परिणाम स्वरूप या प्रथम वितरण राज्य में उपभोग के उद्देश्य से नहीं, स्पष्टीकरण के अंतर्गत नहीं आता था, और यदि अधिनियम के तहत अन्यथा विक्रय पर कर लगाने का अधिकार उत्पन्न होता, तो धारा 33(1)(ए)(आई) द्वारा वहन नहीं किया जाता था।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: दीवानी अपील संख्या 210/1959

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 16 जनवरी, 1958 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति से अपील, जो कि न्यायिक मामले संख्या 156/1957 में दिया गया था।

बी.सी. घोष और पी.के. चटर्जी, अपीलकर्ता के लिए।

एस.पी. वर्मा, उत्तरदाता संख्या 1 से 5 के लिए।

आर.सी. दत्ता, उत्तरदाता संख्या 6 से 20 के लिए।

1960, 7 नवंबर। हिदायतुल्ला दास गुप्ता का निर्णय न्यायमूर्ति अय्यंगार द्वारा दिए गए फैसले पर, तथा न्यायमूर्ति एस. के. दास और शाह द्वारा दिए गए फैसले पर, न्यायमूर्ति शाह द्वारा फैसला सुनाया गया।

अयंगर न्यायमूर्ति- इस अपील में, जो विशेष अनुमति से दायर की गई है, केवल यही प्रश्न उठता है कि क्या वे बिक्री जिनके तहत माल उपभोग के उद्देश्य से बिहार राज्य के बाहर, लेकिन प्रथम वितरण या प्रथम गंतव्य राज्य के भीतर नहीं, संविधान के अनुच्छेद 286(1)(ए) के अनुसार, जैसा कि हालिया संशोधन से पहले था, बिहार राज्य द्वारा विक्रय कर लगाने से मुक्त हैं।

इंडिया कॉपर कॉर्पोरेशन लिमिटेड (जिसे आगे करदाता कंपनी कहा गया है) तांबे और अन्य विभिन्न सामग्रियों एवं खनिज उत्पादों का कारोबार करती है और इसके महाप्रबंधक का कार्यालय बिहार के सिंहभूम जिले में स्थित है। विवादित मूल्यांकन की अवधि 26 जनवरी, 1950 से 31 मार्च, 1950 तक है। करदाता कंपनी की सामान्य प्रथा यह थी कि वह समय-समय पर बिक्री कर के अग्रिम भुगतान के लिए अस्थायी रूप से धनराशि जमा करती थी और प्रत्येक वर्ष के मूल्यांकन के पूरा होने के बाद राशि का अंतिम समायोजन करवाती थी। करदाता कंपनी ने वर्ष 1949-50 के लिए देय बिक्री कर की राशि के संबंध में इसी प्रथा का पालन किया। वित्तीय वर्ष 1 अप्रैल, 1949 से 31 मार्च, 1950 के लिए, सिंहभूम के बिक्री कर अधीक्षक ने 13 नवंबर, 1950 के मूल्यांकन आदेश द्वारा कंपनी की कर देयता 3,60,703-4-0 रुपये निर्धारित की, और कंपनी ने पहले से भुगतान की गई राशि के अतिरिक्त देय राशि का भुगतान किया। यह ध्यान दिया जाएगा कि यह वित्तीय वर्ष बिहार और अन्य दो अवधियों में विभाजित था- (1) संविधान से पूर्व, अर्थात् 1 अप्रैल, 1949 से 25

जनवरी, 1950 तक, और (2) संविधान के बाद की अवधि, 26 जनवरी, 1950 से 31 मार्च, 1950 तक। संविधान-पूर्व काल में किए गए विक्रय पर देय विक्रय कर के संबंध में अब कोई विवाद नहीं है। हालाँकि, करदाता कंपनी ने यह विवाद उठाया कि संविधान-पश्चात काल में, वह उन खरीदारों को किए गए विक्रय पर कोई विक्रय कर देने के लिए उत्तरदायी नहीं है, जिनके अंतर्गत माल का स्वामित्व राज्य के भीतर हस्तांतरित हो गया था, लेकिन माल की सुपुर्दगी बिहार राज्य के बाहर की गई थी और उसका उपभोग भी राज्य के बाहर ही किया जाना था। कंपनी ने यह तर्क दिया कि ऐसे विक्रय मूल रूप में संविधान के अनुच्छेद 286(1) (a) के अंतर्गत कर से मुक्त थे। कंपनी ने 30 दिसंबर, 1952 को बिहार के वाणिज्यिक कर आयुक्त को एक औपचारिक पत्र लिखकर यह मांग रखी, साथ ही बेचे गए माल का पूरा विवरण, बिल संख्या, तिथि और राशि आदि संलग्न किए, ताकि दावा की गई वापसी की गणना की जा सके। करदाता कंपनी ने इसके बाद धारा के अंतर्गत संशोधित विनिर्दिष्ट आदेश याचिकार्न दाखिल करके मूल्यांकन आदेश की समीक्षा के लिए एक औपचारिक याचिका दायर की। बिहार बिक्री कर अधिनियम की धारा 12(2) के तहत वापसी के आवेदन के साथ प्रस्तुत किया गया था।

विभागीय अधिकारियों ने 20 जुलाई, 1953 के आदेश द्वारा इन आवेदनों को अस्वीकार कर दिया। विभाग के समक्ष पुनरीक्षण आदि के माध्यम से की गई आगे की कार्यवाही करदाता कंपनी को वह राहत दिलाने में विफल रही जिसकी उसने मांग की थी। इसके बाद उसने संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत पटना उच्च न्यायालय में एक आवेदन दायर किया, जिसमें 30 नवंबर, 1950 के मूल्यांकन आदेश और समीक्षा, पुनर्मूल्यांकन और वापसी की प्रार्थनाओं को अस्वीकार करने वाले आदेशों को रद्द करने के लिए विनिर्दिष्ट आदेश याचिका जारी करने और विभागीय अधिकारियों को उन बिक्री से संबंधित कर की वसूली की गई राशि वापस करने का निर्देश देने की प्रार्थना की गई, जिसके परिणामस्वरूप माल बिहार राज्य के बाहर उपभोग के लिए वितरित किया गया था।

विद्वान न्यायाधीशों ने उच्च न्यायालय में यह निर्णय दिया कि सिंहभूम के बिक्री-कर अधीक्षक का 13 नवंबर, 1950 का आदेश निरस्त किया जाना चाहिए तथा प्रकरण को पुनः अधीक्षक के पास इस निर्देश के साथ भेजा जाना चाहिए कि संविधानोत्तर अवधि के लिए विधि के अनुसार पुनर्मूल्यांकन किया जाए। साथ ही एक अतिरिक्त निर्देश दिया गया कि उत्तरदाता को निर्धारणाधीन करदाता को वह राशि वापस करनी होगी, जो पुनर्मूल्यांकन के पश्चात देय कर से अधिक पहले ही अदा की जा चुकी है, जैसा कि न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के अनुसार अधीक्षक द्वारा निर्धारित किया जाएगा। प्रयोज्य विधि का निर्धारण करते हुए, विद्वान न्यायाधीशों ने उन विक्रयों के बीच भेद किया जिनके प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप वस्तुओं की आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर किसी अन्य राज्य में की गई और वे वहीं उपभोग की गईं, तथा उन मामलों के बीच, जिनमें इस प्रकार आपूर्ति की गई वस्तुएँ प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग नहीं की गईं, बल्कि प्रथम गंतव्य राज्य से अन्य राज्यों को पुनः निर्यात कर दी गईं। न्यायालय ने यह अभिमत व्यक्त किया कि विक्रयों की प्रथम श्रेणी संविधान के अनुच्छेद 286(1)(क) की व्याख्या के अंतर्गत आती है और उन्हें प्रथम आपूर्ति राज्य के “अंदर” माना जाएगा तथा परिणामस्वरूप अनुच्छेद के आशय में वे बिहार राज्य के “बाहर” हैं, अतः बिहार राज्य द्वारा कराधान से मुक्त हैं। तथापि, विक्रयों की द्वितीय श्रेणी के संबंध में यह निर्णय दिया गया कि वे उक्त व्याख्या के अंतर्गत नहीं आती और इसलिए अनुच्छेद 286(1)(क) के अधीन संवैधानिक छूट से बाहर हैं।

निर्धारणाधीन कंपनी इससे संतुष्ट न होने पर संविधान के अनुच्छेद 132 तथा 133 के अधीन उपयुक्तता प्रमाण-पत्र हेतु उच्च न्यायालय में आवेदन दायर किया, किन्तु उसके अस्वीकार हो जाने पर उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत की और उसे प्राप्त किया; इसी प्रकार यह अपील अब हमारे समक्ष है।

अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री बी. सी. घोष द्वारा हमारे समक्ष तीन बिंदु प्रतिपादित किए गए: (1) कि अनुच्छेद 286(1)(क) तथा उससे संबद्ध व्याख्या (जैसा कि संविधान (छठा संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा संशोधित किए जाने से पूर्व विद्यमान थी) के यथार्थ अर्थान्वयन पर, प्रत्येक विक्रय जिसके प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप वस्तुओं की आपूर्ति राज्य के बाहर उपभोग के लिए की गई हो, उस राज्य की कराधान शक्ति के अंतर्गत नहीं आता जिसमें विक्रय के समय वस्तुएँ स्थित थीं और जिसके परिणामस्वरूप स्वामित्व का अंतरण हुआ, तथा यह अप्रासंगिक है कि ऐसी आपूर्ति प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई थी या उस राज्य में उपभोग के लिए नहीं, बल्कि अन्य राज्यों को पुनः निर्यात करने के लिए की गई थी; (2) कि भले ही अनुच्छेद 286(1)(क) केवल उन विक्रयों को छूट प्रदान करता हो जिनमें विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप वस्तुओं की आपूर्ति प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो, तथापि अभिवचनों और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर यह माना जाना चाहिए कि निर्धारणाधीन कंपनी ने यह स्थापित कर दिया है कि उसके द्वारा किए गए सभी ऐसे विक्रय, जिनके संबंध में कर-भुगतान से छूट का दावा किया गया, इस आवश्यकता के अनुरूप थे; (3) एक संकीर्ण प्रतिपादन यह कि, यदि यह मान भी लिया जाए कि व्याख्या के अंतर्गत आने हेतु आपूर्ति का उद्देश्य प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग होना आवश्यक है, तब भी उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने त्रुटि की, जब उन्होंने निर्धारणाधीन कंपनी से यह अपेक्षा की कि वह केवल यह सिद्ध न करे कि वस्तुओं की आपूर्ति उपभोग के उद्देश्य से की गई थी, बल्कि यह भी सिद्ध करे कि इस प्रकार आपूर्ति की गई वस्तुएँ वास्तव में उसी राज्य में उपभोग की गईं।

अब हम इन बिंदुओं पर उसी क्रम में विचार करेंगे। अनुच्छेद 286(1)(क) तथा उससे संबंधित व्याख्या, जिसके अर्थान्वयन पर प्रथम बिंदु निर्भर करता है, इस प्रकार था:

“अनुच्छेद 286(1) — किसी राज्य का कोई विधि-विधान वस्तुओं के विक्रय या क्रय पर कर आरोपित नहीं करेगा अथवा उसके आरोपण के लिए अधिकृत नहीं करेगा, जहाँ ऐसा विक्रय या क्रय—

(क) राज्य के बाहर होता है; या

(ख)

व्याख्या — उपखंड (क) के प्रयोजनों के लिए, कोई विक्रय या क्रय उस राज्य में घटित माना जाएगा, जहाँ उन वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति ऐसे विक्रय या क्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो, इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए कि वस्तुओं के विक्रय से संबंधित सामान्य विधि के अनुसार स्वामित्व ऐसे विक्रय या क्रय के कारण किसी अन्य राज्य में अंतरण हो गया हो।”

इस व्याख्या के क्षेत्र एवं उद्देश्य पर इस न्यायालय द्वारा *राज्य बॉम्बे बनाम यूनाइटेड मोटर्स (इंडिया) लिमिटेड* (¹) में विचार किया गया था और उसे स्पष्ट किया गया था; इसी निर्णय के निम्न उद्धृत अंश पर विद्वान अधिवक्ता ने अपने प्रतिपादन के समर्थन में निर्भरता व्यक्त की:

“..... संविधान के निर्माताओं को अंतर-राज्यीय तत्वों वाले विक्रय या क्रय पर राज्यों की कराधान शक्ति पर ऐसे प्रतिबंध निर्धारित करने हेतु एक सूत्र निर्मित करना पड़ा, जिससे संविधान के प्रवर्तन से पूर्व देश की विभिन्न प्रांतीय विधायिकाओं द्वारा एक ही लेन-देन पर बिक्री-कर लगाए जाने से उत्पन्न संदेहों और कठिनाइयों से बचा जा सके। यह उन्होंने अनुच्छेद 286 के खंड (1)(क) को उसकी व्याख्या सहित तथा खंड (2) को अधिनियमित करके किया। खंड (1)(क) उन सभी विक्रयों या क्रयों के कराधान को निषिद्ध करता है जो राज्य के बाहर संपन्न होते हैं; किन्तु किसी विक्रय को स्थानीयकृत करना एक जटिल अवधारणा है, क्योंकि विक्रय एक समग्र लेन-देन है, जिसमें विक्रय का समझौता,

1 [1953] एस.सी.आर. 1069, 1081.

स्वामित्व का अंतरण, मूल्य का भुगतान, वस्तुओं की आपूर्ति आदि अनेक तत्व सम्मिलित होते हैं, जो भिन्न-भिन्न स्थानों पर घटित हो सकते हैं। इस कठिनाई के समाधान हेतु यह आवश्यक था कि यह निर्धारित करने के लिए एक सरल और व्यावहारिक परीक्षण निर्मित किया जाए कि कौन-सा विक्रय राज्य के बाहर है, और हमारे मत में व्याख्या का उद्देश्य यही था। यह एक विधिक कल्पना के माध्यम से यह उपबंध करती है कि जिस राज्य में विक्रय या क्रय की गई वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति वहाँ उपभोग के उद्देश्य से की जाती है, वही राज्य वह माना जाएगा जहाँ विक्रय या क्रय संपन्न हुआ है, इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए कि उन वस्तुओं का स्वामित्व किसी अन्य राज्य में अंतरण हुआ हो। इस प्रकार “राज्य के बाहर” होने वाले विक्रय या क्रय को “राज्य के भीतर” होने वाले विक्रय की परिभाषा द्वारा स्पष्ट किया गया है, और यह क्यों कि वास्तविक आपूर्ति तथा उसी राज्य में उपभोग को निर्णायक कारक बनाया गया है, यह आगे स्पष्ट होता है। पर्याप्त प्रादेशिक संबंध की कसौटी को इस प्रकार एक अधिक सरल और व्यावहारिक कसौटी से प्रतिस्थापित किया गया: क्या वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति करारोपण करने वाले राज्य में विक्रय या क्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई है? यदि हाँ, तो ऐसा विक्रय या क्रय उसी राज्य में संपन्न माना जाएगा और अन्य सभी राज्यों के बाहर होगा। अन्य राज्य ऐसे विक्रय या क्रय पर कर लगाने से निषिद्ध होंगे; केवल वही राज्य ऐसा करने के लिए स्वतंत्र रहेगा। इस प्रकार विभिन्न राज्यों द्वारा एक ही लेन-देन पर बहुविध करधान से भी बचाव किया गया।”

यह उल्लेख किया जा सकता है कि निर्णय का यह अंश *बंगाल इम्युनिटी कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य* (1) में व्यक्त असहमति से अप्रभावित है। इस उद्धृत अंश के आधार पर प्रस्तुत तर्क व्यापक रूप से इस प्रकार था: अनुच्छेद 286(1)(क) करारोपण करने

वाले राज्य की विधायी शक्ति पर उन विक्रयों पर कर लगाने के संबंध में निषेध आरोपित करता है जो “राज्य के बाहर” होते हैं। कौन-से विक्रय “राज्य के बाहर” हैं, यह निर्धारित करना सरल नहीं है, क्योंकि यह विक्रय के “स्थान-निर्धारण” पर निर्भर करता है, जिसे अधिकांश मामलों में निश्चित रूप से किसी एक स्थान पर निर्धारित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह अनेक ऐसे कारकों पर आधारित होता है जो एकत्र भी हो सकते हैं और नहीं भी। संविधान-निर्माताओं ने प्रत्यक्ष रूप से यह परिभाषित नहीं किया कि “राज्य के बाहर” होने वाला विक्रय क्या है, बल्कि उन्होंने “राज्य के भीतर” होने वाले विक्रय को स्पष्ट करके वही उद्देश्य प्राप्त किया, जिसके परिणामस्वरूप जो विक्रय “भीतर” नहीं है, उसे “बाहर” माना जाएगा। तथापि यह इंगित करना आवश्यक है कि इस बात पर कोई विवाद नहीं था कि “व्याख्या” की शर्तें तब तक पूर्ण नहीं मानी जाएँगी जब तक कि वस्तुओं की आपूर्ति उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से न की गई हो, अर्थात् प्रथम गंतव्य राज्य में। यदि व्याख्या की शर्तें पूर्ण हो जाती हैं, तो “आपूर्ति-सह-उपभोग” राज्य (अर्थात् वह राज्य जहाँ वस्तुओं की आपूर्ति विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो) को उस विक्रय पर कर लगाने का अधिकार होगा, क्योंकि वह विधिक कल्पना के आधार पर उस राज्य के “भीतर” माना जाएगा। ऐसी स्थिति में, उस राज्य को छोड़कर भारत के अन्य सभी राज्य उस विक्रय पर कर लगाने से वर्जित होंगे, क्योंकि वह विक्रय उन राज्यों के “बाहर” होगा। किन्तु यह प्रतिपादित किया गया कि व्याख्या का प्रभाव यहीं समाप्त नहीं होता, बल्कि यह भी कि संविधान-निर्माताओं के अनुसार कौन-सा विक्रय ही ऐसा है जो राज्य द्वारा कराधान का विषय हो सकता है, इसका भी यह व्याख्या पूर्ण रूप से निरूपण करती है। इन आधारों से विद्वान अधिवक्ता ने दो निष्कर्ष निकाले: (1) जिन मामलों में वस्तुएँ विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप बिहार राज्य के बाहर प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से आपूर्ति की गई, वहाँ व्याख्या की शर्तें पूर्ण होती हैं और ऐसे विक्रय बिहार राज्य के “बाहर” होने के कारण उस राज्य द्वारा कराधान के अधीन नहीं हो सकते। इस सीमा तक कोई विवाद

नहीं है, और उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने, एक सूक्ष्म बिंदु को छोड़कर जिसका उल्लेख आगे किया जाएगा, निर्धारणाधीन कंपनी के इस प्रतिपादन को स्वीकार किया है। (2) एक अन्य परिणाम यह कि जिन मामलों में वस्तुएँ विक्रय के परिणामस्वरूप बिहार राज्य के बाहर आपूर्ति की गईं, किन्तु प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से नहीं, वहाँ व्याख्या की शर्तें यद्यपि पूर्ण नहीं होतीं और परिणामस्वरूप ऐसा विक्रय उस आपूर्ति राज्य के “भीतर” नहीं माना जाता, बल्कि व्याख्या के अंतर्गत भारत के किसी भी राज्य के “भीतर” नहीं माना जाता, तथापि ऐसे विक्रयों को भी अनुच्छेद 286(1)(क) के अंतर्गत भारत के प्रत्येक राज्य के “बाहर” ही माना जाना चाहिए।

उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने इस प्रतिपादन को अस्वीकार किया और हमारे मत में उन्होंने सही ही ऐसा किया। यूनाइटेड मोटर्स प्रकरण के निर्णय से उद्धृत अंश केवल व्याख्या के अंतर्गत आने वाले विक्रयों से संबंधित था और अन्य किसी विषय से नहीं। जब व्याख्या की शर्तें पूर्ण हो जाती थीं, तब ऐसे विक्रय विधिक कल्पना के आधार पर “भीतर” माने जाते थे उस राज्य के, जहाँ आपूर्ति-सह-उपभोग हुआ, और परिणामस्वरूप अन्य सभी राज्यों के “बाहर” माने जाते थे। अतः ऐसे मामलों में केवल वही राज्य, जिसके “भीतर” विक्रय व्याख्या के आधार पर माना जाता है, अनुच्छेद 286(1)(क) द्वारा आरोपित निषेध से मुक्त रहता है। अन्य सभी राज्य ऐसे विक्रयों के संबंध में उस निषेध के अधीन रहते हैं।

किन्तु विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने उक्त उद्धृत अंश में उन विक्रयों के विषय में विचार नहीं किया था, जो व्याख्या की शर्तों को पूर्ण नहीं करते थे। अतः ऐसे विक्रयों, जिन्हें “अव्याख्या-विक्रय” कहा जा सकता है, का स्थान-निर्धारण व्याख्या की शर्तों से स्वतंत्र रूप से निर्धारित किया जाना होगा। ऐसे विक्रय केवल उसी स्थिति में कर से मुक्त होंगे जब वे वास्तव में राज्य के “बाहर” संपन्न हुए हों, अन्यथा नहीं।

अगला प्रश्न यह है कि क्या कोई विक्रय “राज्य के बाहर” माना जाएगा, जहाँ विक्रय संविदा के परिणामस्वरूप वस्तुओं का स्वामित्व राज्य के भीतर क्रेता को अंतरण हो जाता है; अन्य शब्दों में, क्या ऐसा विक्रय, जो स्वामित्व के राज्य के भीतर अंतरण द्वारा पूर्ण होता है, केवल इस कारण “राज्य के भीतर” नहीं माना जाएगा कि विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप वस्तुओं की आपूर्ति राज्य के बाहर की गई है। उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि अनुच्छेद 286(1) में प्रयुक्त शब्द “ऐसा विक्रय या क्रय जो राज्य के बाहर हुआ है” का क्या अर्थ ग्रहण किया जाए। “राज्य के बाहर” अभिव्यक्ति को एक से अधिक अर्थों में समझा जा सकता है। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि ऐसे सभी मामले इसमें सम्मिलित हों जिनमें विक्रय का कोई भी तत्व या अवयव राज्य के भीतर घटित नहीं होता; अन्य शब्दों में, केवल उन मामलों पर लागू माना जाए जहाँ कर लगाने वाले राज्य और विक्रय के बीच कोई प्रादेशिक संबंध ही न हो। स्पष्टतः, यह अर्थ अनुच्छेद 286(1) में अभिप्रेत नहीं हो सकता था, क्योंकि ऐसे मामलों में कर राज्य की विधायी शक्ति के परे होगा, जो संविधान के अनुच्छेद 246 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 54 के साथ पढ़े जाने पर स्पष्ट है। अतः “राज्य के बाहर” अभिव्यक्ति का अर्थ यह नहीं लिया जाना चाहिए कि उस राज्य और विक्रय के बीच कोई भी प्रादेशिक संबंध नहीं है, बल्कि इसे कुछ संकुचित अर्थ में समझा जाना चाहिए। वास्तविक कठिनाई इस संकुचित अर्थ की सटीक परिधि निर्धारित करने में उत्पन्न होती है, जिसमें यह शब्द ऐसे विक्रय का द्योतक है जो वास्तविक रूप में राज्य के “बाहर” है, यद्यपि विक्रय के कुछ ऐसे अवयव उपस्थित हो सकते हैं जो, यदि अनुच्छेद 286(1)(क) के अंतर्गत छूट का प्रावधान न होता, तो राज्य को यह कहकर कर लगाने का अधिकार प्रदान कर सकते थे कि वह विक्रय संविधान के अनुच्छेद 246 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 54 के अधीन उसकी विधायी शक्ति के भीतर आता है।

जैसा कि पूर्व में इंगित किया जा चुका है, किसी विक्रय का स्थान-निर्धारण करना सरल नहीं है, और एक पूर्ण विक्रय लेन-देन के विभिन्न घटक—जिनमें वस्तुओं की आपूर्ति

भी सम्मिलित है—स्वयं को ऐसे पर्याप्त प्रादेशिक संबंध के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जिनके आधार पर उन्हें विक्रय के स्थान को निर्धारित करने वाला माना जा सकता है। उदाहरणार्थ, केवल दृष्टांत के रूप में, वह स्थान जहाँ विक्रय संविदा के समय वस्तुएँ स्थित हैं, वह स्थान जहाँ विक्रय संविदा संपन्न होती है, वह स्थान जहाँ वस्तुओं का स्वामित्व अंतरण होता है, तथा वह स्थान जहाँ आपूर्ति होती है—ये सभी विक्रय के स्थान के निर्धारण हेतु प्रतिस्पर्धा करते हैं। संविधान से पूर्व, इन तथा अन्य समान कारकों को इस रूप में माना जाता था कि वे पर्याप्त प्रादेशिक संबंध प्रदान करते हैं, जिससे उस राज्य को, जहाँ इनमें से कोई घटना घटित हुई हो, उस विक्रय पर कर लगाने की विधायी क्षमता प्राप्त हो जाती थी। इसके परिणामस्वरूप एक ही विक्रय लेन-देन पर अनेक राज्यों द्वारा बहुविध कराधान किया जाने लगा, जिससे उपभोक्ता पर अत्यधिक भार पड़ा और व्यापार तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था भी प्रभावित हुई। यह इंगित किया गया है कि अनुच्छेद 286(1)(क) का उद्देश्य इसी स्थिति का निराकरण करना था।

यदि किसी एक राज्य को किसी विशिष्ट विक्रय लेन-देन पर कर लगाने की शक्ति प्रदान की जानी हो, तो उसके बाद यह प्रश्न उठता है कि उस राज्य का निर्धारण कैसे किया जाए, जिसके संबंध में यह कहा जा सके कि संबंधित विक्रय उस राज्य के “बाहर” नहीं था; अन्य शब्दों में, उस विशेष राज्य का निर्धारण कैसे किया जाए जिसके संबंध में यह कहा जा सके कि विक्रय उस राज्य के “भीतर” हुआ था। इस समस्या का समाधान स्वयं अनुच्छेद में निहित दो संकेतों से प्राप्त होता है: (1) अनुच्छेद 286(1) के प्रारंभिक शब्द, जो “ऐसा विक्रय या क्रय जो घटित होता है” की बात करते हैं; तथा (2) व्याख्या में निहित अपवाद उपबंध, जो वस्तुओं के विक्रय से संबंधित सामान्य विधि का उल्लेख करता है, जिसके अनुसार “ऐसे विक्रय या क्रय के कारण वस्तुओं का स्वामित्व किसी अन्य राज्य में अंतरण हो गया हो।” इन दोनों को साथ पढ़ने पर यह स्पष्ट होता है कि यह वस्तुओं के स्वामित्व का उसी राज्य के भीतर अंतरण है, जिसे यह निर्धारित करने के उद्देश्य से निर्णायक माना गया है कि

संबंधित विक्रय उस राज्य के “भीतर” है या “बाहर”, और इस प्रकार वह “व्याख्या” के संचालन के अधीन होगा। फलस्वरूप, जिस राज्य में स्वामित्व का अंतरण होता है, वही एकमात्र राज्य होगा जिसे उस विक्रय पर कर लगाने की शक्ति प्राप्त होगी। जैसा कि इस न्यायालय के हाल के निर्णय *बर्मा शेल ऑयल स्टोरेज एंड डिस्ट्रीब्यूटिंग कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम वाणिज्यिक कर अधिकारी* (1) में स्पष्ट किया गया है:

“यहाँ ‘विक्रय’ (अनुच्छेद 286(1)(क)) से अभिप्राय ऐसे पूर्ण लेन-देन से है जिसके द्वारा वस्तुओं का स्वामित्व अंतरण हो जाता है। वस्तुओं का स्वामित्व अंतरण होने से पूर्व विक्रय संविदा केवल निष्पादनाधीन रहती है और क्रेता के पास केवल वादाधिकार होता है। संविधान विक्रय को स्वामित्व के अंतरण द्वारा पूर्ण हुए लेन-देन के रूप में देखता है, न कि वस्तुओं के विक्रय के लिए किसी निष्पादनाधीन संविदा के रूप में।”

यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि ऐसा विक्रय “राज्य के बाहर” हो, तथापि राज्य की कर लगाने की शक्ति व्याख्या के प्रभाव से निष्प्रभावी हो सकती है, क्योंकि व्याख्या अपने अपवाद उपबंध के द्वारा विक्रय के स्थान को परिवर्तित कर देती है और विक्रय लेन-देन को उस राज्य के भीतर मानती है जहाँ आपूर्ति-सह-उपभोग हुआ है, अर्थात् वह राज्य जहाँ विक्रय लेन-देन को संपन्न माना जाना चाहिए। जब व्याख्या की शर्तें पूर्ण हो जाती हैं, तब यह विधिक कल्पना के आधार पर यह मान लिया जाता है कि विक्रय उस आपूर्ति राज्य के “भीतर” हुआ है और परिणामस्वरूप उस राज्य के “बाहर” है जहाँ स्वामित्व का अंतरण हुआ था। अतः निष्कर्ष यह है कि जहाँ वस्तुओं का स्वामित्व विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप किसी राज्य के भीतर अंतरण होता है, वहाँ ऐसा विक्रय अनुच्छेद 286(1)(क) के प्रयोजनों के लिए “राज्य के बाहर” नहीं माना जाएगा, जब तक कि व्याख्या का संचालन न हो। यह भी जोड़ना आवश्यक है कि राज्य की करारोपण शक्ति तब भी उपलब्ध नहीं होगी, जब तक कि संबंधित लेन-देन अनुच्छेद 286 के उपखंड (1)(ख), (2) और (3) के अंतर्गत लगाए गए अन्य निषेधों से

अप्रभावित न हो। अतः अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का यह प्रतिपादन कि “अव्याख्या-विक्रयों” के संबंध में बिहार राज्य को इस आधार पर कर लगाने की शक्ति प्राप्त नहीं है कि ऐसे विक्रय अनुच्छेद 286(1)(क) के अंतर्गत राज्य के “बाहर” हैं, अस्वीकार किया जाना चाहिए।

अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत द्वितीय प्रतिपादन यह था कि, भले ही प्रथम बिंदु पर उनका मत त्रुटिपूर्ण माना जाए, तथापि निर्धारणाधीन कंपनी द्वारा किए गए सभी विक्रय अनुच्छेद 286(1)(क) की व्याख्या की परिधि में आते हैं, क्योंकि वे ऐसे विक्रय थे जिनके प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप वस्तुओं की आपूर्ति प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई थी, और उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने यह मानकर त्रुटि की कि कुछ विक्रय इस आवश्यकता के अनुरूप नहीं थे। इस प्रतिपादन के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान दो बिंदुओं की ओर आकृष्ट किया। प्रथम, उन्होंने 30 दिसंबर, 1952 को निर्धारणाधीन कंपनी की ओर से वाणिज्यिक कर आयुक्त, बिहार, पटना के समक्ष प्रस्तुत आवेदन का उल्लेख किया, जिसमें अदा किए गए कर की वापसी का दावा निम्नलिखित आधार पर किया गया था:

यह उल्लेख करने के पश्चात कि 26 जनवरी, 1950 से 31 मार्च, 1950 की अवधि के बीच किए गए विक्रयों पर कर संविधान के अनुच्छेद 286 के कारण आरोपणीय नहीं था, आवेदन में कहा गया: “हमारे द्वारा तांबा तथा पीतल की चादरों एवं वृत्तों के कच्चे माल के कुल विक्रय, जो क्रेताओं के उपभोग हेतु रेलवे रसीदों के माध्यम से प्रेषित किए गए, निम्नलिखित हैं।” इसके पश्चात किए गए विक्रयों तथा उन पर अदा किए गए कर का विवरण दिया गया। इस प्रकार प्रस्तुत दावा अनुच्छेद 226 तथा 227 के अधीन उच्च न्यायालय में दायर याचिका के साथ संलग्न किया गया और उसका अंग बनाया गया, तथा याचिका की कंडिका 9 में इस पत्र का उल्लेख करते हुए उसकी प्रति सम्मिलित कर ‘क’ के रूप में चिह्नित किया गया। इस कंडिका में, जो कि अधिवक्ता द्वारा निर्भर किया गया अन्य

आधार था, कर-वापसी का दावा “बिहार राज्य के बाहर स्थित क्रेताओं को उपभोग हेतु किए गए विक्रयों” के संबंध में बताया गया। विद्वान अधिवक्ता ने इस बात पर विशेष बल दिया कि कंडिका 9 तथा संलग्नक ने स्पष्ट रूप से यह प्रतिपादित किया है कि जिन विक्रयों के संबंध में कर-वापसी का दावा किया गया, उनमें वस्तुओं की आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई थी, और चूँकि बिहार राज्य ने इन अभिकथनों की सत्यता का खंडन करते हुए कोई प्रति-शपथपत्र प्रस्तुत नहीं किया, अतः उच्च न्यायालय को यह मान लेना चाहिए था कि व्याख्या की शर्तें पूर्ण हो गई थीं और माँगी गई वापसी का आदेश दे देना चाहिए था। किन्तु हम इस प्रतिपादन को निराधार मानते हैं। न तो प्रदर्श ‘क’ में प्रस्तुत दावे में और न ही याचिका की कंडिका 9 में उन विक्रयों के बीच कोई भेद किया गया था, जिनमें आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई थी, और उन विक्रयों के बीच, जिनमें राज्य के बाहर आपूर्ति तो की गई, किन्तु उपभोग प्रथम गंतव्य राज्य में न होकर अन्य राज्यों में किया जाना था। वास्तव में, यह तथ्य उच्च न्यायालय में दायर याचिका की बाद की कंडिकाओं से स्पष्ट हो जाता है, जिनसे यह प्रकट होता है कि निर्धारणाधीन कंपनी ने उन विक्रयों के संबंध में कर-छूट का दावा किया था, जिनमें आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर हुई थी, चाहे वह आपूर्ति प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो या अन्यथा। उच्च न्यायालय में दायर याचिका की कंडिका 17(क) में निर्धारणाधीन ने यह कथन किया: “याचिकाकर्ता बिहार राज्य के बाहर आपूर्ति की गई वस्तुओं पर कर देने के लिए उत्तरदायी नहीं था, जो बिहार राज्य के बाहर ही उपभोग के लिए थीं,” और पुनः उसी कंडिका के उपखंड (iii) में यह कहा गया: “वस्तुएँ बिहार राज्य के बाहर थीं, बिहार राज्य के बाहर आपूर्ति की गईं और बिहार राज्य के बाहर उपभोग की गईं, अतः वे बिहार राज्य द्वारा बिक्री-कर के अधीन नहीं थीं,” तथा इसी कंडिका के उपखंड (v) में भी “बिहार राज्य के बाहर उपभोग के लिए बिहार राज्य के बाहर आपूर्ति की गई वस्तुओं” का उल्लेख किया गया। इसी प्रकार का विचार कंडिका 19

में भी प्रतिपादित किया गया है, जिसमें याचिका का प्रार्थना-भाग निहित था। इन अभिकथनों से स्पष्ट है कि निर्धारणाधीन का दावा यह था कि अनुच्छेद 286(1)(क) में निहित छूट का लाभ प्राप्त करने के लिए यह पर्याप्त है कि वस्तुओं की आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर की गई हो, और यह अप्रासंगिक है कि वह आपूर्ति प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई थी या नहीं। यह वही तर्क है जिसे विद्वान अधिवक्ता द्वारा पूर्व में प्रस्तुत किया गया था, और जिस पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं। अतः उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा उन दो प्रकार के विक्रयों के बीच भेद करना, जैसा कि हमने पूर्व में इंगित किया है, पूर्णतः उचित था।

अंतिम बिंदु जो विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रतिपादित किया गया, यह था कि उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने यह अपेक्षा करके त्रुटि की कि निर्धारणाधीन यह सिद्ध करे कि बिहार राज्य के बाहर आपूर्ति की गई वस्तुएँ वास्तव में प्रथम गंतव्य राज्य में *उपभोग की गई थीं*, तभी कर-छूट का लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अपीलवादी निर्णय में विद्वान न्यायाधीशों ने कहा है:

“याचिकाकर्ता को छूट का अधिकार नहीं होगा यदि वस्तुएँ प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग नहीं की गईं, बल्कि उस राज्य से अन्य राज्यों को पुनः निर्यात कर दी गईं।”

अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह आपत्ति उठाई कि अनुच्छेद 286(1)(क) की व्याख्या के अधीन यह आवश्यक नहीं है कि उस राज्य में, जहाँ प्रथम गंतव्य के रूप में आपूर्ति की गई, वस्तुओं के वास्तविक उपभोग का प्रमाण प्रस्तुत किया जाए; बल्कि यह पर्याप्त है कि विक्रय के अंतर्गत आपूर्ति का उद्देश्य उस राज्य में उपभोग हो। उनका यह भी प्रतिपादन था कि यदि कोई विक्रय इस शर्त को पूर्ण करता है—अर्थात् प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के उद्देश्य से आपूर्ति की गई है—तो उसके पश्चात यदि क्रेता अपने स्वयं के उद्देश्यों के लिए उन वस्तुओं को अन्य राज्यों को पुनः निर्यात कर देता है, तो यह ऐसा विषय नहीं है जिससे विक्रेता का कोई सरोकार हो, और इससे उस विक्रय का स्वरूप, जो अनुच्छेद

286(1)(क) की व्याख्या के अंतर्गत आता है, प्रभावित नहीं होगा। अतः उच्च न्यायालय के आदेश में यह स्पष्ट करते हुए संशोधन किया जाएगा कि यदि वस्तुएँ विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप बिहार राज्य के बाहर प्रथम आपूर्ति राज्य में उपभोग के उद्देश्य से आपूर्ति की गई थीं, तो निर्धारणाधीन को आरोपित बिक्री-कर से छूट का अधिकार होगा, और यह आवश्यक नहीं होगा कि निर्धारणाधीन यह अतिरिक्त रूप से सिद्ध करे कि इस प्रकार आपूर्ति की गई वस्तुएँ वास्तव में प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग की गई थीं।

इस संशोधन के अधीन, अपील असफल होती है; तथापि, प्रकरण की परिस्थितियों में व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

शाह, न्यायमूर्ति—हम न्यायमूर्ति राजगोपाल अय्यंगार के निष्कर्ष से सहमत हैं, किन्तु चूँकि इस प्रश्न के प्रति हमारा दृष्टिकोण कुछ भिन्न है, हम अपने कारण पृथक् रूप से अभिलिखित करना उचित समझते हैं।

बिहार बिक्री-कर अधिनियम, 1947, भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 100(3) के साथ पठित सूची II की प्रविष्टि 42 द्वारा प्रदत्त विधायी अधिकार के प्रयोग में अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम की धारा 2(ग) में “विक्रय” की परिभाषा (जहाँ तक प्रासंगिक है) इस प्रकार दी गई थी कि इसका अर्थ है “नकद, स्थगित भुगतान या अन्य मूल्यवान प्रतिफल के बदले वस्तुओं के स्वामित्व का अंतरण... बशर्ते ... तथा यह भी बशर्ते कि भारतीय वस्तु विक्रय अधिनियम, 1930 में इसके विपरीत किसी भी बात के होते हुए भी, किसी भी वस्तु का विक्रय—”

(i) जो वस्तुएँ वास्तव में उस समय बिहार में स्थित हों, जब उनके संबंध में उक्त अधिनियम की धारा 4 में परिभाषित विक्रय संविदा की जाती है,

(ii) जो वस्तुएँ वहाँ के उत्पादक या निर्माता द्वारा बिहार में उत्पादित या निर्मित की गई हों, ऐसी वस्तुओं के संबंध में, चाहे आपूर्ति कहीं भी की जाए या विक्रय संविदा कहीं भी

संपन्न हो, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए यह माना जाएगा कि विक्रय बिहार में हुआ है।

भारत शासन अधिनियम, 1935 की सूची II की प्रविष्टि 42 के अधीन, प्रांतीय विधानमंडल विक्रयों पर कर इस प्रकार आरोपित कर सकते थे कि वे किसी ऐसे तथ्य या परिस्थिति का चयन करें जो राज्य की कराधान शक्ति के साथ प्रादेशिक संबंध स्थापित करता हो, भले ही विक्रय की गई वस्तुओं का स्वामित्व प्रांत के बाहर अंतरण हुआ हो या विक्रय संविदा के अंतर्गत आपूर्ति प्रांत के बाहर हुई हो। इस प्रकार, केवल ऐसे संबंध के अस्तित्व पर आधारित कराधान—जैसे वस्तुओं का उत्पादन या निर्माण, या विक्रय संविदा की तिथि पर प्रांत में वस्तुओं की उपस्थिति—विक्रय और विधान बनाने वाले प्रांत के बीच पर्याप्त संबंध स्थापित करता था, और भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन विधिवत् अधिनियमित किया जा सकता था—देखें *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य* ⁽¹⁾ तथा *पोपटलाल शाह बनाम मद्रास राज्य* ⁽²⁾

संविधान के अनुच्छेद 286 द्वारा राज्यों की विधायी शक्तियों पर निम्नलिखित सीमाएँ आरोपित की गईं:

अनुच्छेद 286—(1) किसी राज्य का कोई विधि-विधान वस्तुओं के विक्रय या क्रय पर कर आरोपित नहीं करेगा अथवा उसके आरोपण के लिए अधिकृत नहीं करेगा, जहाँ ऐसा विक्रय या क्रय—

(क) राज्य के बाहर होता है; या

(ख) वस्तुओं के भारत के क्षेत्र में आयात या भारत के क्षेत्र से निर्यात की प्रक्रिया में होता है।

व्याख्या— उपखंड (क) के प्रयोजनों के लिए, कोई विक्रय या क्रय उस राज्य में घटित माना जाएगा, जहाँ उन वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति ऐसे विक्रय या क्रय के प्रत्यक्ष

1 [1958] एस.सी.आर. 1355

2 [1953] एस.सी.आर. 677.

परिणामस्वरूप उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो, इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए कि वस्तुओं के विक्रय से संबंधित सामान्य विधि के अनुसार उन वस्तुओं का स्वामित्व ऐसे विक्रय या क्रय के कारण किसी अन्य राज्य में अंतरण हो गया हो।

(2) जहाँ तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे, किसी राज्य का कोई विधि-विधान ऐसे किसी विक्रय या क्रय पर कर आरोपित नहीं करेगा अथवा उसके आरोपण के लिए अधिकृत नहीं करेगा, जो अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के क्रम में होता है:

परंतु यह कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा यह निर्देश दे सकते हैं कि किसी भी राज्य की सरकार द्वारा संविधान के प्रारंभ से ठीक पूर्व विधिपूर्वक आरोपित किया जा रहा कोई कर, इस उपखंड के प्रावधानों के प्रतिकूल होने के बावजूद, 31 मार्च, 1951 तक आरोपित किया जाता रहेगा।

(3) किसी राज्य की विधानमंडल द्वारा निर्मित कोई विधि, जो ऐसे वस्तुओं के विक्रय या क्रय पर कर आरोपित करती है या उसके आरोपण के लिए अधिकृत करती है, जिन्हें संसद द्वारा विधि द्वारा समुदाय के जीवन के लिए आवश्यक घोषित किया गया हो, तब तक प्रभावी नहीं होगी जब तक कि उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित न रखा गया हो और उनकी स्वीकृति प्राप्त न हो गई हो।

राज्यों की कराधान शक्ति पर, जो संविधान-पूर्व विधियों के अधीन थी, प्रतिबंध लगाने के उद्देश्य से, विधि अनुकूलन आदेश द्वारा इन विधियों में संशोधन किए गए। विधि अनुकूलन आदेश, 1951 के द्वारा, बिहार बिक्री-कर अधिनियम में 26 जनवरी, 1950 से प्रत्यावर्ती प्रभाव के साथ धारा 33 जोड़ी गई, जिसमें यह उपबंध किया गया:

“(1) इस अधिनियम में निहित किसी भी बात के होते हुए भी—

(क) वस्तुओं के विक्रय या क्रय पर कर इस अधिनियम के अधीन आरोपित नहीं किया जाएगा—”

- (i) जहाँ ऐसा विक्रय या क्रय बिहार राज्य के बाहर संपन्न होता है; या
- (ii) जहाँ ऐसा विक्रय या क्रय भारत के क्षेत्र में वस्तुओं के आयात की प्रक्रिया में या भारत के क्षेत्र से वस्तुओं के निर्यात की प्रक्रिया में होता है;

(ख) 31 मार्च, 1951 के पश्चात किसी भी वस्तु के विक्रय या क्रय पर कर आरोपित नहीं किया जाएगा, यदि ऐसा विक्रय या क्रय अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के क्रम में होता है, सिवाय इसके कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे;

(2) संविधान के अनुच्छेद 286 के खंड (1) की व्याख्या, उपधारा (1) के खंड (क) के उपखंड (1) की व्याख्या के लिए लागू होगी।”

इस संशोधन द्वारा बिहार राज्य की कराधान शक्ति पर वही प्रतिबंध आरोपित कर दिए गए, जो संविधान के अनुच्छेद 286 द्वारा संविधानोत्तर विधियों पर लगाए गए थे।

इस न्यायालय ने *बंगाल इम्युनिटी कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य*(¹) में यह प्रतिपादित किया है कि अनुच्छेद 286 के विभिन्न उपबंधों—अर्थात् खंड (1)(क), (1)(ख), (2) तथा (3)—का उद्देश्य भिन्न-भिन्न विषयों से संबंधित है, और एक को दूसरे में आरोपित या अंतर्निहित नहीं किया जा सकता। अतः, बिहार बिक्री-कर अधिनियम में धारा 33 के समावेशन तथा अनुच्छेद 286 के साथ उसके पठन से, यद्यपि आरोपण धारा तथा “विक्रय” की परिभाषा के साथ पढ़े जाने पर अन्यथा व्यापक शक्ति प्रदान की गई थी, राज्य की कराधान शक्ति पर तीन प्रकार के संयुक्त प्रतिबंध आरोपित हो गए। 26 जनवरी, 1950 से बिहार राज्य की विधानमंडल—राज्य के बाहर संपन्न होने वाले विक्रयों पर, भारत के क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा भारत के क्षेत्र से निर्यात की प्रक्रिया में होने वाले विक्रयों पर, तथा अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के क्रम में होने वाले विक्रयों पर, कर आरोपित नहीं कर सकती थी। अनुच्छेद 286(1)(क) की व्याख्या, जिसे बिहार बिक्री-कर अधिनियम की धारा 33 की उपधारा (2) द्वारा समाविष्ट किया गया है, के अनुसार कोई विक्रय उस राज्य में

घटित माना जाएगा जहाँ वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति ऐसे विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई हो, यद्यपि वस्तुओं के विक्रय से संबंधित विधि के अनुसार स्वामित्व ऐसे विक्रय के कारण किसी अन्य राज्य में अंतरण हुआ हो। बॉम्बे राज्य बनाम यूनाइटेड मोटर्स (इंडिया) लिमिटेड (2) में यह निर्णय दिया गया कि अनुच्छेद 286(1) (क) के प्रवर्तन के पश्चात्, स्पष्टीकरण में वर्णित विक्रय, जिसे सुविधा की दृष्टि से "स्पष्टीकरण विक्रय" कहा जा सकता है, केवल उसी राज्य द्वारा कराधीन होगा जिसमें विक्रय की प्रत्यक्ष परिणति के रूप में वस्तुओं की वास्तविक आपूर्ति उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की जाती है। कर अधिरोपित करने का अधिकार इस कारण उत्पन्न होता है कि उस विक्रय को उस राज्य में घटित माना जाता है तथा अन्य सभी राज्यों के बाहर माना जाता है, और अन्य राज्यों को ऐसे विक्रय पर कर लगाने से निषिद्ध किया गया है; केवल वही राज्य इस संबंध में कर अधिरोपित करने के लिए स्वतंत्र रहता है।

भारत शासन अधिनियम, 1935 की सूची 2 की प्रविष्टि 42 द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में निर्मित बिहार विक्रय कर अधिनियम, अनुच्छेद 372 के अधीन विद्यमान विधि के रूप में सुरक्षित है, परंतु धारा 33 की उपधारा (1) तथा (2) के संयुक्त प्रभाव के कारण, बिहार राज्य भारत के क्षेत्र से बाहर निर्यात तथा आयात के क्रम में होने वाले वस्तुओं के विक्रय पर कर अधिरोपित करने में अक्षम है, और 31 मार्च, 1951 के पश्चात्, अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के क्रम में होने वाले वस्तुओं के विक्रय पर भी कर लगाने में अक्षम है। इस न्यायालय द्वारा यूनाइटेड मोटर्स वाद (1) में अनुच्छेद 286(1)(क) के स्पष्टीकरण की विषयवस्तु के प्रतिपादन के दृष्टिकोण से, बिहार राज्य तथाकथित "स्पष्टीकरण विक्रय" पर कर लगाने में भी अक्षम है, जहाँ वस्तुओं की आपूर्ति विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप किसी अन्य राज्य में उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की जाती है। इस अंतिम निषेध के कारण, धारा 33 की उपधारा (1)(क)(i) तथा उपधारा (2) द्वारा निर्दिष्ट सीमा तक, बिहार राज्य

अपने विक्रय पर कर अधिरोपित करने की शक्ति से वंचित हो जाता है; तथापि यह निषेध राज्य की उस शक्ति का पूर्णतः उन्मूलन नहीं करता जो राज्य और विक्रय के मध्य वास्तविक क्षेत्रीय संबंध पर आधारित विक्रयों पर कर लगाने से संबंधित है। अन्य शब्दों में, यह उपबंधित करते हुए कि जब विक्रय बिहार राज्य के बाहर होता है, तब धारा 33(1)(क)(i) के अधीन उस अधिनियम के अंतर्गत कर अधिरोपित नहीं किया जाएगा, केवल उन "स्पष्टीकरण विक्रयों" पर कर लगाने की शक्ति ही अपहृत की जाती है जो बिहार राज्य के भीतर नहीं होते, परंतु उन "गैर-स्पष्टीकरण बिक्री" पर कर लगाने की शक्ति नहीं हटाई जाती, जिनमें यद्यपि सामान्य विक्रय विधि के अधीन संपत्ति राज्य के बाहर स्थानांतरित होती है, तथापि राज्य की कराधान शक्ति और उस विक्रय के मध्य वह संबंध विद्यमान रहता है जैसा कि धारा 2(जी) में विक्रय की परिभाषा द्वारा परिकल्पित है। यदि विक्रय ऐसा है जिसमें वस्तुओं की आपूर्ति बिहार राज्य के बाहर की गई है, परंतु वह आपूर्ति न तो विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप हुई है और न ही प्रथम आपूर्ति के राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई है, तो ऐसा विक्रय स्पष्टीकरण के अंतर्गत नहीं आएगा, और यदि अधिनियम के अधीन क्षेत्रीय संबंध के आधार पर अन्यथा कराधिकार उत्पन्न होता है, तो धारा 33 की उपधारा (1)(क)(i) द्वारा अधिरोपित निषेध से वह प्रभावित नहीं होगा। बिहार राज्य का यह अधिकार कि वह वास्तविक क्षेत्रीय संबंध के आधार पर विक्रय पर कर अधिरोपित करे, अधिनियम की धारा 33 द्वारा अप्रभावित रहता है; अतः बिहार विक्रय कर अधिनियम की धारा 2(ग) में परिभाषित सभी विक्रय कराधीन होंगे, सिवाय उन विक्रयों के जो धारा 33(1)(क)(ii), धारा 33(2) तथा बिहार राज्य के बाहर स्थित "स्पष्टीकरण विक्रय" के अंतर्गत आते हैं।

अपीलकर्ता कंपनी बिहार राज्य में ताँबा तथा अन्य खनिज उत्पादों के निर्माण का व्यवसाय करती है। इसका पंजीकृत कार्यालय तथा मुख्य व्यवसाय स्थल बिहार राज्य के सिंहभूम जिले में स्थित है और यह बिहार विक्रय कर अधिनियम, 1947 के अधीन "व्यापारी" के रूप में पंजीकृत है। अपीलकर्ता कंपनी ने आकलन वर्ष, जो 31 मार्च, 1950 को

समाप्त हुआ, के दौरान अपने उत्पादों को भारत के विभिन्न स्थानों पर प्रेषित किया और विक्रय कर अधिकारी द्वारा निर्धारणित कर का भुगतान कर दिया। अब अपीलकर्ता 26 जनवरी से 31 मार्च, 1950 की अवधि के लिए अदा किए गए कर की वापसी प्राप्त करने का प्रयास कर रही है, इस आधार पर कि वह कर विधि की भ्रांति के अंतर्गत अदा किया गया था। संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन में उच्च न्यायालय ने विक्रय कर प्राधिकारियों को यह निर्देश दिया कि वे उस कर की राशि वापस करें, जिसके संबंध में यह सिद्ध नहीं किया जा सका कि वह उन वस्तुओं के विक्रय पर अदा की गई थी जो प्रथम गंतव्य राज्य में आपूर्ति की गईं तथा उपभोग की गईं। जहाँ वस्तुएँ बिहार के बाहर स्थित प्रथम गंतव्य राज्य में आपूर्ति की गईं तथा उपभोग की गईं, उन पर अपीलकर्ता को विक्रय कर अदा करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता था—यह निर्विवाद है। अपीलकर्ता ने यह भी दावा किया कि जिन वस्तुओं की आपूर्ति बिहार के बाहर स्थित प्रथम गंतव्य राज्य में उपभोग के लिए की गई थी, उन पर भी वह विक्रय कर अदा करने के लिए उत्तरदायी नहीं था, भले ही यह सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य न हो कि वस्तुएँ वास्तव में उस राज्य में उपभोग की गई थीं। हमारे निर्णयानुसार, उच्च न्यायालय इस निर्देश देने में त्रुटिपूर्ण था कि अनुच्छेद 286(1)(क) के साथ पठित स्पष्टीकरण द्वारा प्रदत्त छूट, जिसे प्रासंगिक समय पर विधि अनुकूलन आदेश, 1951 के माध्यम से बिहार विक्रय कर अधिनियम की धारा 33 में समाविष्ट किया गया था, केवल उन सभी विक्रयों पर लागू होती है जिनमें वस्तुओं की आपूर्ति तथा उपभोग प्रथम गंतव्य राज्य में हुआ हो। यदि वस्तुओं की आपूर्ति उपभोग के उद्देश्य से की गई है, तो यह महत्वहीन है कि वे वास्तव में उस राज्य में उपभोग की गईं या नहीं जहाँ उनकी आपूर्ति की गई थी। राज्य की यह शक्ति कि वह राज्य की कराधान शक्ति और विक्रय के मध्य क्षेत्रीय संबंध के आधार पर कर अधिरोपित करे, पूर्व में वर्णित कारणों से उस सीमा तक प्रभावित होती है, जहाँ तक वह अनुच्छेद 286(1)(क)(i) तथा उससे संबंधित स्पष्टीकरण के समावेशन द्वारा उस अधिनियम में प्रतिबंधित की गई है। अतः, 26 जनवरी, 1950 या

उसके पश्चात् संपन्न ऐसे विक्रय, जिनमें वस्तुओं की आपूर्ति विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप किसी अन्य राज्य में उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की जाती है, कराधीन नहीं होंगे।

उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों में निम्नानुसार संशोधन किया जाएगा—

कर अधीक्षक का आदेश निरस्त किया जाता है। उन्हें इस निर्णय के आलोक में अदा किए गए कर की वापसी प्रदान करने का निर्देश दिया जाता है। यदि वस्तुओं की आपूर्ति विक्रय के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप किसी अन्य राज्य में उस राज्य में उपभोग के उद्देश्य से की गई है, तो अपीलकर्ता कर के भुगतान से छूट का अधिकारी होगा।

अपील संशोधन के अधीन निरस्त की जाती है।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।

